**National Journal of Multidisciplinary Research and Development**
**www.nationaljournals.com**
**ISSN: 2455-9040**
**Received: 25-08-2022, Accepted: 12-09-2022, Published: 28-09-2022**
**Volume 7, Issue 2, 2022, Page No. 27-30**

# साहित्य और समाज के बदलते प्रतिमान

**पूनम रानी**
शोधार्थी हिंदी, राजकीय महाविद्यालय बनबसा, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

**सारांश**
साहित्य और सामाजिक प्रतिमान का घनिष्ठ सम्बंध है, दोनों एक दूसरे के पूरक है। ये सामाजिक मूल्य ही है, जिसकी रक्षा और विस्तार का दायित्व साहित्य पर होता है। साहित्य सदियों से अपनी भूमिका का निर्वाह बखूबी करता आ रहा है, परन्तु आज के समाज में विद्वानों ने समाज की व्याख्या इतने दृष्टिकोणों से कर दी है, कि साहित्य अपनी विषय–वस्तु को लेकर भ्रमित होने लगा है। भ्रम का कारण यह नहीं कि विषय–वस्तु के साथ विच्छेद हो रहा है, अपितु किस विषय पर लिखा जाये जो समाज मूल्यों को स्पष्ट कर सके। मूल्यों का मूल्य इसीलिए होता है, कि समाज उसे स्वीकार करता है, और साहित्यकार उन्हीं मूल्यों पर अपना साहित्य गढ़ कर उसे आने वाली पीढ़ी के लिए सुरक्षित कर सके, पाश्चात्य संस्कृ ति के प्रभाव और आधुनिक तकनीकी युग ने मनुष्यों हेतु नये मूल्यों का सृजन किया है, जो धीरे–धीरे पुराने प्रतिमानों का स्थान लेते जा रहे है। अतः बदलते समाज के बदलते प्रतिमानों पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। हम सदैव प्रचलित प्रतिमानों के आधार पर ही समाज ही व्याख्या नहीं कर सकते, यह परिवर्तन ही है, जो हमें जीवित रखे हुये है, और हमारे समाज को जड़ता से बनाए हुये है, ऐसे में साहित्यकारों की जिम्मेदारी समाज विद्वानों के समान्तर हो जाती है, बदलते युग में साहित्यकार अपनी लेखनी से नये सामाजिक प्रतिमानों को गढ़ सकते है, हालांकि ऐसे प्रयास राजेन्द्र प्रसाद द्वारा रचित ''एक दुनियांरू समान्तर'' कहानी संग्रह में देखने को मिलता है, परन्तु पूर्ण नहीं अभी निरन्तर शोध की आवश्यकता है, ताकि आधार स्तम्भ के रूप में स्थापित प्रतिमान साहित्य और समाज को दिशा निर्देशित कर सके।

**मूल शब्दः** समाज, प्रतिमान, साहित्य, शोषण, साम्राज्यवाद, पूंजीवाद, आधुनिकीकरण

## प्रस्तावना

### साहित्य

भाषा के माध्यम से जो अन्तरंग अनुभूति होती है, उसे लिपिबद्ध करना ही साहित्य कहलाता है। साहित्य शब्द संस्कृत के 'सहित' शब्द से बना है। साहित्य शब्द का विग्रह दो तरह से किया जा सकता है, 'सहित स $ हित – सहभाव अर्थात् हित् का साथ होना ही साहित्य है, अतः समाज कल्याण हेतु रचा गया अर्थमय, उद्देश्यपूर्ण विचार साहित्य कहलाता है। साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन मात्र के लिए नहीं, अपितु उसका परम लक्ष्य समाज कल्याण के सन्दर्भ में होना चाहिए। मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में–

''केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।''

साहित्य की परिभाषा के संदर्भ में साहित्यकारों के अपने–अपने विचार है–
आचार्य शुक्ल ने साहित्य को ''जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब माना है।''
कोलरिज– ''सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम क्रम है।''
मैथ्यु अर्नाल्ड– ''कविता जीवन की व्याख्या करती है, अतः साहित्य जीवन की व्याख्या है।''
किसी भी भाषा के वाचिक तथा लिखित शब्दों को हम साहित्य की संज्ञा से अभिहित करते है।

### समाज

समाज शब्द संस्कृत से सम् एंव अज् दो शब्दों से मिलकर बना है सम् का अर्थ है, इकट्ठा एक साथ और अज् का अर्थ है, साथ रहना, इसका अभिप्राय है, एक साथ मिलजुल कर रहने वाला समूह। अनेक विद्वानों ने समाज को अपने विचारों में परिभाषिम करने की कोशिश की है, जो निन्न है–
डॉ0 जेम्स – ''मनुष्य के शान्तिपूर्ण सम्बन्धों की अवस्था का नाम समाज है।''
लेवियर – ''समाज मनुष्यों के समूह का नाम नहीं है, वरन् यह ऐसी जटिल अन्तरक्रियाओं का प्रतिमान है, जो मनुष्यों के बीच पैदा होता है।''
उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर समाज मानव के सामाजिक सम्बंधों की एक व्यवस्था है।
मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के साथ ही चिन्तनशील प्राणी भी है। इसलिए वह समाज में ही रहता है, और उसकी सभी आवश्यकतायें समाज द्वारा ही पूर्ण होती है। समाज के विकास का सर्वप्रथम चरण परिवार है, जो समाज की सबसे छोटी इकाई है। प्राचीन समय में मानव आदिम अवस्था में रहता था, धीरे–धीरे वह समूह या संगठन में रहने लगा, और

अपनी श्रम प्रक्रिया के माध्यम से उसने परस्पर सम्बंध स्थापित किये, जिससे समाज का जन्म हुआ है, और यही प्रक्रिया उसके विकास का माध्यम बनी।

**प्रतिमान**

किसी भी व्यक्ति के समान आचरण के सही एवं उपर्युक्त प्रतिरूप को प्रतिमान कहा जाता है। प्रतिमानों को एक तरह से मूल्यों का प्रतिबिम्ब माना जा सकता है। मूल्य स्थिर नहीं होते है। प्रतिमान एक ऐसी पूंजी है, जिसके माध्यम से हम समाज या किसी देश काल के सामाजिक स्तर को माप सकते है, वास्तव में प्रतिमान एक वैचाारिक ईकाई है, जो मानव जाति से लेकर समाज के हर क्षेत्र की ओर व्याप्त है। जिसके आधार पर सही गलत का निर्णय करने में मनुष्य सक्षम हो सका है।

मूल्य और समाज का गहरा सम्बंध है, क्योंकि मूल्य का संबंध सामाजिक जीवन से होता है। मूल्य आत–तौर पर काल विभाजन तथा सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप परिवर्तित होते है। मूल्य व्यक्तिगत न होकर सामाजिक है, जो मानव के संवेदनाओं, आदर्शो, संकल्पों, आचरण आदि से सम्बन्धित है, जिससे समाज प्रभावित होता है, और यही मूल्यों के संदर्भ में राधाकृष्ण मुखर्जी की मान्यता है–''मूल्यों अनिवार्यताः सामाजिक देन है। साथ ही व्यक्ति को सामाजिक संदर्भो एंव सामान्य लक्ष्यों को जो व्यक्ति का अभिन्न अंग बन गए है, इंगित करते हैं।''

**बदलते सामाजिक मूल्यों का साहित्य पर प्रभाव**

साहित्य लेखन मानव मस्तिष्क ही अनुपम देन है। साहित्य समाज में होने वाली घटनाओं से ही विषय–वस्तु प्राप्त करता है, परन्तु आज के युग में पहले साहित्य लेखन कार्य होता है, और तब वह जाकर समाज का मार्गदर्शन करता है। समाज में मानवीय क्रिया–कलापो के चलते हमेशा से परिवर्तन आये है, जिससे साहित्य में नयी–नयी विधाओं का जन्म हुआ। जिसमें उपन्यास, नाटक, कहानी, डायरी, आत्मकथा, यात्रावृन्तांत, रिपोर्ताज आदि प्रमुखतः से विद्यमान है।

साहित्यकार समाज निर्माण में अहम् भूमिका निभाता है। समाज की प्रगति तथा विकास के लिए साहित्यकार निरन्तर उत्कृष्ट साहित्य सृजन करता है। साहित्य लेखन कार्य प्राचीन समय से ही चला आ रहा, जहां उसका स्वरूप कुछ सीमाओं के अन्तर्गत ही सीमित था। ये उस समय के समाज को दर्शाता है, जब समाज कई रूढ़िवादी परम्पराओं के बंधनों में जकड़ा हुआ था। साहित्य के माध्यम से ही हमारे सम्मुख समाज के इतिहास का चित्र अंकित होता है, जो उस समाज से हमें अवगत करता है। जिससे हम सभी अबोध है, जो सिर्फ हमारे लिए कल्पना मात्र है, जैसे वीरगाथा काल का वह समय जो आज के वर्तमान समय से कहीं अधिक भयावह था। क्लेश, द्वेष, चारों और युद्धों की स्थिति का वातावरण बना रहता था। जिसके कारण समाज में अस्थितरता बनी रहती थी, जिसका प्रभाव साहित्य जगत पर भी पड़ा। उस समय के साहित्य में वीर राजाओं, युद्धगाथाओं, कलह, दुराचारी, तीर–कमान हाथी–घोड़ों, तलवारों का वर्णन किया गया जिसमें चन्द कृत 'पृथ्वीराज रासो' ग्रंथ महत्वपूर्ण है, जो उस समय के सामाजिक स्थिति को दर्शाता है, परन्तु मध्य काल आते–आते साहित्य तथा समाज दोनों का स्वरूप कुछ बदलाव के साथ आगे बढ़ा जहां युद्ध और तलवारों की गूंज नहीं भक्ति का स्वर हर ओर गुजने लगा परन्तु समाज में कुछ विकृति भी होने लगी थी। मानव बाह्य आडम्बरों, धर्मकर्म काण्डों में उलझता गया। जिसे कुछ भक्त कवियों ने अपने ज्ञान तथा उपदेश के माध्यम से समाज को सही मार्ग दिखाया। साहित्य के इस क्षेत्र में कबीर, तुलसी, सूर तथा जायसी जैसे महान साहित्यकारों का नाम आज भी बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है, जिन्होनें एक आदर्श समाज का निर्माण किया। कबीर एक युग प्रवर्तक होने के साथ ही समाज सुधारक भी थे, जिन्होंने मूर्तिपूजा, हिंसा, जाति–पाति, तीर्थाटन आदि का उग्र विरोध किया। जिसका उल्लेख निम्न शीर्षकों में है–

**हिंसा विरोध–**

''दिन भर रोजा रखत है रात हनत है गाय।
यह तो खून वह बंदगी कैसी खुशी खुदाय।।
बकरी पाती खात है ताकी काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात है, ताको कौन हवाल।।''

**तीर्थाटन का विरोध–**

''गंगा नहाये कहों को नर तीरंगे।
मछरी न तरी जाकों पानी में घर है।।''

परन्तु रीतिकाल का साहित्य अधिकांशतः दरबारों में लिखा गया, जो उस परिवर्तित समाज का दृश्य अंकित करता है, जहां राजाओं की विलासिता पूर्ण जीवन शैली थी। सामाजिक दृष्टि से इस काल को आदि से अन्त तक घोर अद्यः पतन का युग कहना चाहिए। इस समय समाज में सामन्तवाद का बोल–बाला था जहां राजाओं का शासन था, जिसके कारणवंश कृषक वर्ग, जातिवर्ग, नारी आदि की दयनीय स्थिति थी। जिसका परिचय हमें साहित्य के माध्यम से मिलता है। इस समय के प्रमुख कवि घनानंद, मतिराम, आलम, बिहारी आदि है। भक्तिकाल में जहां अनुभूति को प्रमुखतः दी गयी वहीं रीतिकाल कवियों ने अभिव्यक्ति को काव्य का आधार बनाया।

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी साहित्य क्षेत्र में कई बदलाव आये, जैसे–जैसे समाज में परिवर्तन होता गया उसका असर साहित्य पर भी पड़ने लगा। समाज पुरानी परम्पराओं, मान्यताओं आदि से बाह्य रूप से तो मुक्त हुआ, परन्तु आन्तरिक रूप से मुक्त नहीं हो सका। 1857 ई0 में भारत में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ जिससे जनचेतना का विकास हुआ। समाज अच्छे बुरे का फर्क जानने लगा। आधुनिक समाज से निर्माण में साहित्य का भी पूर्ण योगदान रहा। भारतेन्दु युग की शुरूआत तथा

नवजागरण काल साहित्य के क्षेत्र में संदेशवाहक से रूप में आया। उस समय समाज में फैली सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, कुरीतियों जैसे विषयों का समावेश साहित्य में किया गया। यह वह युग था जो प्राचीन परम्पराओं और मर्यादाओं को साथ लेकर नवीर प्रंसगो के साथ नयी चेतना से आगे बढ़ा, उस समय समाज में अंधविश्वासों ने लोगों को जकड़ रखा था, जो उनकी उन्नति मार्ग में बाधा था। इन प्रथा को नष्ट करने के लिए निम्न आन्दोलन किये गये। जिसमें राजा राममोहन राय, गोपालकृष्ण, गोखले, महात्मा गांधी ने अग्रणीय भूमिका निभाई।

मनुष्य का सम्बन्ध साहित्य और समाज दोनों से परस्पर जुड़ा है। मनुष्य अपना पालन–पोषण, शिक्षा–दीक्षा समाज के अन्तर्गत ही करता है, तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ मानवीय तो कुछ अमानवीय कृत भी करता है। जिसका सीधा प्रभाव समाज पर पड़ता है, जिससे समाज में समस्यायें उत्पन्न होती है। आज समाज की स्थिति सोचनीय है, अमीर और अधिक अमीर तथा गरीब और अधिक गरीब होते जा रहे हैं। आधुनिकीकरण के चलते जहां एक तरफ समाज आगे बढ़ा है, तो कुछ समस्यायें भी उसके पीछे–पीछे चली हैं। बेकारी, भुखमरी से लोग परेशान है, किसान आत्महत्यायें कर रहे है, विदेशी कम्पनियों ने देशी धंधों को चौपट कर रखा है। साहित्यकार इस समस्याओं को साहित्य के माध्यम से हमारे सम्मुख रखता है, जैसे कृषक जीवन की त्रासदी पर लिखा गया साहित्य 'गोदान' जो किसान जीवन की अति मार्मिक गाथा है। केदारनाथ अग्रवाल ने अकाल से पीड़ित व्यक्ति की दुःखद स्थिति को अपने साहित्य में उजागर किया है–

''बाप बेटा बेचता है भूख से बेहाल होकर
धर्म धीरज प्राण खोकर हो रही अनरीति बर्बर।''

साहित्य ने हमेशा समाज के दर्पण के रूप में कार्य किया है, जहां उसने ग्रामीण तथा शहरी अर्थव्यवस्था पर भी करारी चोट की है। पहले नारी को केवल भोग्या समझा जाता रहा, पर आधुनिक समय में नारी उत्थान के लिए प्रयास किये गये, समाज ने नारी को पुरूषों के समान जीने का अधिकार दिया, इस संदर्भ में पन्त जी लिखते है–

''योनि नहीं है, रे नारी वह भी माननी प्रतिष्ठित।
उसे पूर्ण स्वाधीन करो वह रहे न नर पर अवसित।।''

आज भले ही प्राचीन समाज की अपेक्षा वर्तमान समय में नारी हर क्षेत्र में पुरूषों से कंधा से कंधा मिला कर चल रही है, परन्तु आज भी नारी इस युग में सुरक्षित नहीं है, बलात्कार तथा यौन शोषण जैसी समस्या आज भी समाज के हर कोने में छिपी है। जिसका जीवान्त उदाहरण हम 'निर्भया हत्याकाण्ड' पर हुये, जन–आन्दोलन में देख सकते हैं। जिसका एक दृश्य हमें अनीता भारती के साहित्य में देखने को मिलता है –

''जब इस देश में हजारों निर्भयायें हो
जब एक ही निर्भया के लिए
जन्तर–मन्तर को
देश की संसद को
देश के पुलिस थानों को
देश के सारे गली–मोहल्लों को
युद्ध स्थल में बदल देना
कहां तक बाजिब हैं'' ?

जहां एक तरफ नारी का शोषण हुआ है, तो वहीं दलितों का भी हाल कुछ ऐसा ही है। प्राचीन समय में उन्हें शिक्षा तथा हर सामाजिक व्यवस्था से वंचित रखा जाता था, परन्तु आज वर्तमान समय में भी पढ़ा लिखा दलित वर्ग भी अपनी बराबरी तथा अपने अधिकारों के लिए निरन्तर आवाज उठा रहा है। इसी स्वर में कवि जयप्रकाश कर्दम लिखते हैं–

''तुम कहते हम में भेद नहीं। तुम कहते हम सब भाई हैं।
फिर क्यों ऊचें तुम मैं नीचा। क्यों जाति–वर्ग की खाई है।
तुम कहते हम सब हिन्दू है। हिन्दू होने का गर्व करो।
हिंदुत्व राज की नगरी में। किन्तु मेरा घर द्वार कहां है।
तुम चाहो रामराज्य आये। तुम श्रेष्ठ, शुद्र मैं बना रहूं।
तुमको सारे अधिकार रहे। मैं वर्जनाओं में लदा रहूं।''

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, जो समाज के लिए अनिवार्य है, तभी व्यक्ति पुरानी परम्पराओं को छोड़ कर नयी कल्पनाओं का अविष्कार कर नये समाज का निर्माण करता है। आज वर्तमान समय पुरातन की अपेक्षा कहीं अधिक विकसित हो चुका है, परन्तु फिर भी मानव समाज की समस्याओं से जूझ रहा है। नये तकनीकी, नये यन्त्रों ने मानव समाज की आवश्यकताओं को पूर्ण तो किया है, परन्तु समाज में इन बदलाव के कारण मानव इतना अधिक व्यस्त हो गया है, कि एक भटकाव, अलगाव, अहं, ऊब, एकाकीपन जैसी स्थिति पैदा हो गयी है, जो समाज को अन्दर ही अन्दर नष्ट करती जा रही है। समाज में तेजी से जो बदलाव आया है, उसने युवा पीढ़ी को अधिक प्रभावित किया है। समाज में इन समस्याओं का साहित्य पर भी गहरा प्रभाव पड़ा जिसने साहित्य की विषय–वस्तु को बदल के ही रख दिया। कामवासना आज के वर्तमान युग की सबसे बड़ी समस्या है, जो समाज में युवा पीढ़ी को बर्बाद कर रही है, जिसका जिक्र अज्ञेय ने अपने

साहित्य में फ्रायड के मनोविश्लेषण के माध्यम से किया है। उनका साहित्य इन कामवासना, अहं, से पीड़ित है। जिसका उदाहरण हमें 'शेखररू एक जीवनी' में देख सकते है। इस क्षेत्र में अज्ञेय ही नहीं धर्मवीर भारती, अरूण जैसे साहित्यकारों ने अपने साहित्य में यौनाचार का नग्न चित्रण किया है। उदाहरणार्थ –

''आह ! मेरा श्वास है
धमनियों में उमड़ आई लहू की धार
प्यार है। अभिशप्त तुम कहां हो नारी।''

साहित्य ने समाज में फैली हर व्यवस्था को काव्य की दृष्टि से देखा, और उसके निवारण हेतु जनता को उसके प्रति जागरूक भी करते रहे, समाज में व्याप्त पूंजीवादी, साम्राज्यवादी ताकते समाज में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विषमतायें पैदा कर शिक्षा, नैतिकता, संस्कृति को नष्ट करने में तुली है। ऐसी व्यवस्थाओं पर साहित्यकारों ने खुलकर प्रहार किया है। मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित केदारनाथ अग्रवाल ने इस शोषण, दमन तथा अत्याचार का विरोध किया, जिसकी झलक उनकी इस कविता के माध्यम से देखते है–

''साम्राज्यवाद के गुरगे, साम्राज्यवाद के कुत्ते
भू–कर उगाहने वाले, दुष्ट धरती के।
आना धेला के जमींदार, लाल साहब पटवारी जी।''

साहित्यकार समाज में फैली व्यवस्था को भंग कर देना चाहता है, वह कहता है–

''हो समाज चिथड़े–चिथड़े शोषण पर जिसकी नींव पड़ी।
बिना पूंजीवाद को मिटाये, किसी तरह भी यह जीवन स्वस्थ नहीं हो सकता।''

समाज के निरन्तर बदलाव के चलते मनुष्य अपने सुख–सुविधाओं में इतना खो गया है, कि उसे अपने सिवाये कुछ नहीं दिखता है, वह स्वार्थ सिद्धी में इतना लीन हो गया है, कि बस अपने तक ही सीमित रह गया है। साठोत्तरी कविताओं और कहानियों ने मानव जीवन के हर एक पहलू को खोलकर सामने ला खड़ा किया है। समकालीन कविता के स्वरूप का विश्लेषण करते हुये डॉ0 उपाध्याय ने कहा है–'समकालीन कविता में जो हो रहा है, वह सीधा खुलासा है। इसे पढ़कर वर्तमान काल का बोध होता है, क्योंकि उसमें जीते, संघर्ष करते, बौखलाते, तड़पते, गरजते तथा ठोकर खाकर सोचते वास्तविक आदमी का परिदृश्य है।'
समकालीन कहानिकारों में राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी, मृदुला गर्ग आदि लेखकों ने अपने साहित्य में आधुनिकता बोध के माध्यम से सामाजिक परिवेश से हटकर वैयक्तिक जीवन की निजी समस्याओं स्त्री–पुरूष सम्बन्ध, घुटन, यौनाचार, अंह आदि समस्याओं को चुना।
आज तकनीकी सुविधाओं ने हर एक क्षेत्र को प्रभावित किया है। नयी सुविधायें, संचार माध्यम, नवीन प्रयोग, भाषाओं का नवीनीकरण प्रयोग जिसने साहित्य लिखने और समझने के साथ ही साहित्य जगत को और अधिक विकसित किया है।

## निष्कर्ष

साहित्य पुरातन से लेकर अद्यतन तक कि विस्तृत जानकारी, ऐतिहासिक घटनायें आदि को अपने अन्दर सम्माहित रखता है, जो समाज के लिए उपयोगी तथा अमूल्य निधि है, जो समाज में चली आ रही युगों–युगों की गतिविधियों की जानकारी से लोगों को अवगत कराती है। लेखक सिर्फ अपने स्वार्थहित के लिए नहीं अपितु समाज तथा आनन्द हेतु लिखता है। लेखक समाज का अंग है, अतः जो कुछ वह लिखता है, वह लोक हित के लिए ही होता है, जो समाज का पथ प्रदर्शक का कार्य करता है।
साहित्य का मुख्य उद्देश्य सदा से ही समाज का वास्तविक चित्रण करना रहा है। जिससे सभी अज्ञान है। साहित्यकार अपने साहित्य में परिवेश चुनता है। उसके साहित्य में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियां महत्वपूर्ण रहती है। साहित्यकार अपने साहित्य में सामाजिक भावनाओं को साथ लेकर चलता है। उसका साहित्य समाज की विकृत कुरीतियों के खिलाफ आवाज है। मानव निर्मित इस समाज में व्यवस्था तथा अन्य समस्याओं के चलते समय–समय पर परिवर्तन हुये है, और इन परिवर्तनों ने समाज के हर क्षेत्र हर पहलू के साथ साहित्य को भी प्रभावित किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार–'जनता की परिवर्तनशील चितवृत्तियों की परम्परा और साहित्य की परम्परा का सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास है।'

## संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ0 महाजन धर्मवीर, समकालीन समाजशास्त्र के सिद्धांत, पृ0 357।
2. विद्याभूषण, डी0 आर0 सचदेव, समाजशास्त्र के सिद्धांत, पृ0 68।
3. मिश्र अरूण, साहित्य सिद्धांत और अवधारणाएं, पृ0 19।
4. शर्मा शेखर, साहित्य सिद्धांत और साहित्य स्वरूप, पृ0 12।
5. सिंहमार बलराज, मानव मूल्य और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, खामा पब्लिशर्स, दिल्ली, 2002
6. डॉ0 उपाध्याय विश्वम्भर नाथ, समकालीन कविता की भूमिका, पृ0 02।
7. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, प्रकाशन पेपर बैक्स, नोएडा।
8. बाल्मीकि ओमप्रकाश, दलित साहित्य की सौन्दर्यता, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।